

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 10 अध्याय 21 — कृष्ण की वंशी का गान

5 October 2026



जब कृष्ण की वंशी शरद-वन में बज उठती है, तो उसे सुनने वाला हर प्राणी — मृग, मयूर, नदियाँ, स्वयं चरती हुई गौएँ — अपनी सुध-बुध खो बैठता है, और गोपियाँ उस धुन का वर्णन करने के लिए एकत्र होती हैं जिसे उनका अपना हृदय भी पूरी तरह कह नहीं पाता।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञप्ति में पुनः स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और शिक्षाओं की हमारी भक्तिमयी यात्रा। दशम स्कन्ध का यह इक्कीसवाँ अध्याय कुछ क्षणों के लिए घटना से हटकर विस्मय की ओर मुड़ता है: कृष्ण बलराम और ग्वाल-बालकों के साथ शरद-वन में प्रवेश करते हैं और केवल अपनी वंशी बजाते हैं, और वही एक स्वर इस सम्पूर्ण अध्याय का विषय बन जाता है। शुकदेवजी राजा परीक्षित को बताते हैं कि दूर से वह संगीत सुनकर ब्रज की नारियाँ अपनी सखियों को उसका वर्णन करने के लिए एकत्र हुईं — और जिसकी प्रशंसा वे करना चाहती थीं, उसी ने उनके शब्दों को अपने भीतर समेट लिया। आगे वही उनका गीत है, जिसमें मृग और नदियाँ, गौएँ और मुनि, भटकता मेघ और विशाल गोवर्धन पर्वत — सभी उसी वंशी-ध्वनि की आराधना करते दिखाए गए हैं जिसने गोपियों के हृदय हर लिए हैं।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण

- स्कन्ध: 10 (दशम स्कन्ध, पूर्वार्ध)
- अध्याय: 21 (एकविंश अध्याय)
- अध्याय शीर्षक: गोपियों द्वारा कृष्ण की वंशी-ध्वनि का गुणगान
- मुख्य वक्ता: श्री शुकदेव गोस्वामी (राजा परीक्षित को सुनाते हुए); अध्याय के भीतर स्वयं व्रज की गोपियाँ यह गीत गाती हैं
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित
- मुख्य स्थल: व्रज में यमुना-तट पर स्थित शरद-ऋतु का वृन्दावन वन
- केंद्रीय विषय: बलराम सहित गौ चराते हुए कृष्ण की वंशी-ध्वनि, और गोपियों का वह उल्लासमय गीत जो बताता है कि वह संगीत मृगों, मयूरों, नदियों, गौओं, स्वर्ग की अप्सराओं, वन-मुनियों और गोवर्धन पर्वत को किस प्रकार मोहित करता है
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 10, अध्याय 21, श्लोक 1–20
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण संस्करण)

पूर्व अध्याय का संदर्भ

बीसवें अध्याय में शुकदेवजी ने बताया था कि वर्षा के पश्चात् व्रज में शरद ऋतु किस प्रकार उतरी — निर्मल आकाश, स्वच्छ जल, खिलते कमल — और इस ऋतु के हर चिह्न की तुलना उस निर्मलता से की जो भक्ति किसी आत्मा में लाती है। वह अध्याय इस बात के साथ समाप्त हुआ था कि ऋतु और कृष्ण-बलराम की उपस्थिति, दोनों ने मिलकर पृथ्वी को सुन्दर बना दिया। यह अध्याय उसी वन में, अब पूर्ण शरद-शोभा से सुसज्जित, आरम्भ होता है।

शरद वन में कृष्ण की वंशी-ध्वनि

शुकदेवजी ने पुनः कथा आरम्भ की। गौओं और ग्वाल-बालकों के साथ कृष्ण उस वन में गहरे प्रवेश कर गए, जिसके जल शरद से निर्मल हो चुके थे और वायु खिले हुए कमल-कुंजों की सुगन्ध से भरी थी (श्लोक 1)। ऐसी झीलें और पहाड़ियों के बीच से गुज़रते हुए, जो खिले वृक्षों पर मँडराते भ्रमरों के गुंजन और पक्षियों के कलरव से गूँज रही थीं, मधु के स्वामी ने बलराम और अपने सखाओं के साथ गौएँ चराई — और उसी सौंदर्य के बीच उन्होंने अपनी वंशी बजाई।

कुसुमितवनराजिशुष्मिभृङ्गद्विजकुलघुष्टसरःसरिन्महीध्रम् ।

मधुपतिरवगाह्य चारयन् गाः सहपशुपालबलश्रुकूज वेणुम् ॥ २ ॥

kusumita-vanarāji-śuṣmi-bhṛṅga-dvija-kula-ghuṣṭa-saraḥ-sarin-mahīdhram

madhupatir

avagāhya cārayan gāḥ saha-paśu-pāla-balaś cukūja veṇum

अर्थ: खिले हुए कुंजों वाले उस वन में — जिसकी झीलें, नदियाँ और पहाड़ियाँ पक्षियों और मद में डूबे भ्रमरों से गूँज रही थीं — मधु के स्वामी ने बलराम और ग्वाल-सखाओं के साथ गौएँ चराते हुए अपनी वंशी बजाई। (स्कन्ध 10, अध्याय 21, श्लोक 2)

व्रज की नारियाँ संगीत का वर्णन करने का प्रयास करती हैं

कृष्ण की वंशी की वह ध्वनि सुनते ही हृदय में प्रेम जाग उठता था। व्रज की कुछ नारियाँ, जहाँ खड़ी थीं वहीं से वह ध्वनि सुनकर, कृष्ण की दृष्टि से परे अपनी सखियों के पास गई, जो कुछ उन्होंने सुना था उसे कहने के लिए। उन्होंने संगीत बजाते समय कृष्ण के हाव-भाव का वर्णन करना आरम्भ किया — किन्तु उनका मन उस प्रेम के वेग से इतना अभिभूत हो गया कि वे अपनी बात पूरी न कर सकीं (श्लोक ३-४)। उनकी कल्पना में भी वे स्वयं को खो बैठीं: एक अनुपम रूप, उन्होंने कहा, जिसके शीश पर मयूर-पंख, कानों में कर्णिकार के फूल, गले में पाँच रंगों की माला और कटि पर स्वर्ण-सा वस्त्र शोभित था, जो अपनी वंशी के छिद्रों को मानो अपने अधरों के अमृत से भर रहे थे, जिनके पदचिह्नों से सुशोभित हो वृन्दावन में प्रवेश कर रहे थे, और जिनकी महिमा ग्वाल-बालक पहले से ही गा रहे थे (श्लोक 5)। हर जीव के मन को सम्मोहित कर लेने वाली उस वंशी-ध्वनि को सुनते हुए, जब वे उसे शब्दों में बाँधने का यत्न कर रही थीं, तभी समस्त व्रज-नारियों ने अपने मन में ही उन प्रभु को आलिंगन में भर लिया।

इति वेणुरवं राजन् सर्वभूतमनोहरम् ।

श्रुत्वा व्रजस्त्रियः सर्वा वर्णयन्त्योऽभिरेभिरे ॥ ६ ॥

iti veṇu-ravaṁ rājan sarva-bhūta-manoharam śrutvā vraja-striyaḥ sarvā varṇayantyo 'bhirebhire

अर्थ: हे राजन्! प्रत्येक जीव के मन को मोहने वाली उस वंशी-ध्वनि को सुनकर, व्रज की सभी नारियों ने, उसका वर्णन करने का प्रयास करते-करते ही, अपने हृदय में प्रभु का आलिंगन कर लिया। (स्कन्ध 10, अध्याय 21, श्लोक 6)



दूर से कृष्ण की वंशी सुनकर व्रज की नारियाँ अपनी सखियों को उसका वर्णन करने के लिए एकत्र होती हैं, किन्तु उनके शब्द प्रेम के आगे अधूरे रह जाते हैं (श्लोक 3-6)।

गोपियों का गीत: नेत्रों का सर्वश्रेष्ठ फल

जो गोपियाँ एक-दूसरे से पूरी तरह न कह सकीं, उसे अब उन्होंने गीत के रूप में उड़ेल दिया, और शुकदेवजी उनके वही शब्द परीक्षित को सुनाते हैं। सखियों, यही नेत्रों का सर्वश्रेष्ठ फल है, वे गाती हैं; उन्हें इससे बड़ा कोई पुरस्कार ज्ञात नहीं जो उन्हें प्राप्त है जिनकी दृष्टि ने नन्द के दोनों पुत्रों के मुखमण्डल को निहारा है — वंशी बजाते और प्रेम-भरी चितवन बिखेरते हुए — जब वे अपने सखाओं के साथ गौएँ ले जाते हैं (श्लोक 7)। आम की कोंपलों, मयूर-पंखों और फूलों की मालाओं से सज्जित, हाथ में कमल और कानों में कुमुद धारण किए, दोनों भाई ग्वालों और गौओं के बीच ऐसे शोभित होते थे मानो रंगमंच पर सर्वश्रेष्ठ अभिनेता गाते हुए खड़े हों (श्लोक 8)। इस सीधी-सादी वंशी ने भला ऐसा कौन-सा पुण्य किया है, वे सोचती हैं, कि वह अकेली कृष्ण के अधरों से बहती उस मिठास का अनन्त पान करती है — वह मिठास जो हर अधिकार से गोपियों की अपनी है (श्लोक 9)।

श्रीगोप्य ऊचुः

अक्षण्वतां फलमिदं न परं विदामः सख्यः पशूननु विवेशयतोर्वयस्यैः ।

वक्त्रं व्रजेशसुतयोरनवेणु जुष्टं यैर्वा निपीतमनुरक्तकटाक्षमोक्षम् ॥ ७ ॥

*śrī-gopya ūcuḥ akṣaṇvatām phalam idaṁ na paraṁ vidāmaḥ sakhyaḥ paśūn anuviveśayator
vayasyaiḥ vaktraṁ vrajeśa-sutayor anaveṇu-juṣṭaṁ yair vā nipītam anurakta-kaṭākṣa-mokṣam*

अर्थ: गोपियाँ बोलीं: सखियों, यही नेत्रों का सर्वश्रेष्ठ फल है — हम इससे बड़ा कोई पुरस्कार नहीं जानतीं — जो उन्हें प्राप्त है जिन्होंने अपनी दृष्टि से व्रजेश-सुतों के वंशी-सुशोभित मुखों से बिखरती प्रेम-भरी चितवन का पान किया है, जब वे अपने सखाओं के साथ गौएँ ले जाते हैं। (स्कन्ध 10, अध्याय 21, श्लोक 7)



मयूर-पंखों से सुशोभित और वन-पुष्पों की माला पहने कृष्ण और बलराम वंशी बजाते हुए गौएँ ले जाते हैं, और गोपियाँ गाती हैं कि उनके मुख-दर्शन ही नेत्रों का सच्चा पुरस्कार है (श्लोक 7-9)।

वृन्दावन को माहेमा और गोवर्धन के मोहेत प्राणी

वंशी से हटकर गोपियों की दृष्टि उस भूमि पर गई जिस पर वह सुनी जाती है। वृन्दावन, वे गाती हैं, पृथ्वी की महिमा को स्वर्ग से भी आगे फैलाता है, क्योंकि इसकी मिट्टी कृष्ण के चरण-कमलों के स्पर्श से धन्य हुई है; और गोविन्द की वंशी सुन उल्लास में नाचते मयूरों को देख गोवर्धन की ढलानों पर हर अन्य प्राणी स्तब्ध हो जाता है (श्लोक 10)। धन्य हैं वे मृगियाँ, भले ही भोली-भाली हों, जो अपने साथियों के पास खड़ी होकर नन्द के उस दुलारे को, उसके अद्भुत वन-वेष में, अपनी स्थिर प्रेम-भरी चितवन से पूजा अर्पित करती हैं (श्लोक 11)। यह संगीत स्वर्गलोक में भी अनुभव होता है: विमानों में विचरती देवांगनाएँ उन मधुर स्वरों को सुनकर पूर्णतः सुध खो बैठती हैं, वेणियों से फूल झर पड़ते हैं, वस्त्र अस्त-व्यस्त हो जाते हैं (श्लोक 12)। पृथ्वी पर गौएँ और बछड़े स्थिर खड़े रह जाते हैं, कानों के पात्रों से उस अमृत-सम संगीत को पीते हुए, नेत्रों के मार्ग से हृदय में गोविन्द को धारण करते हुए, आँखों में आँसू लिए — और माताओं के स्तनों से बहता दूध बछड़ों के मुख में वैसे ही रह जाता है, उसे निगलने की शक्ति भी शेष न रहने से (श्लोक 13)। और इस वन के पक्षी, गोपियाँ गाती हैं, अवश्य ही मुनि होंगे: शाखाओं पर बैठे, आँखें मूँदे, हर अन्य ध्वनि भूलकर, वे केवल सुनते रहते हैं (श्लोक 14)।



गोवर्धन की ढलानों पर मयूर वंशी-ध्वनि सुनकर आनन्द से नाचते हैं, जबकि मृग और हर अन्य प्राणी मोहित होकर स्तब्ध खड़े रह जाते हैं (श्लोक 10-14)।

नदियाँ उनके चरण का आलिंगन करती हैं, और मेघ उनका छत्र बनता है

नदियाँ भी, गोपियाँ गाती हैं, इस प्रेम से अछूती नहीं हैं। मुकुन्द का वह संगीत सुनकर उनकी तीव्र धारा भँवरों में बदल गई, मानो प्रेम ने स्वयं उनके वेग को थाम लिया हो; और अपनी लहरों की भुजाओं से नदियों ने उनके दोनों चरणों को आलिंगन में बाँध लिया, कमल अर्पित करते हुए (श्लोक 15)।

नद्यस्तदा तदुपधार्य मुकुन्दगीतमावर्तलक्षितमनोभवभग्नवेगाः ।

आलिङ्गनस्थगितमूर्मिभुजैर्मुरारेर्गृह्णन्ति पादयुगलं कमलोपहाराः ॥ १५ ॥

nadyas tadā tad upadhārya mukunda-gītam āvarta-lakṣita-manobhava-bhagna-vegāḥ ālīngana-sthagitam ūrmi-bhujair murārer gṛhṇanti pāda-yugalaṁ kamalopahārāḥ

अर्थ: मुकुन्द का वह संगीत सुनकर नदियों का तीव्र प्रवाह भँवरों में टूट गया, मानो प्रेम ने उसे रोक दिया हो; और अपनी लहरों की भुजाओं से उन्होंने मुरारि के दोनों चरणों को आलिंगन में बाँधकर कमल अर्पित किए। (स्कन्ध 10, अध्याय 21, श्लोक 15)



वंशी सुनकर नदियों की तीव्र धारा भँवरों में बदल जाती है, और वे अपनी लहरों की भुजाओं से कृष्ण के चरणों का आलिंगन कर कमल अर्पित करती हैं, जबकि एक मेघ उन्हें छत्र-सा आश्रय देता है (श्लोक 15-16)।

बलराम और ग्वाल-बालकों के साथ तेज़ धूप में गौएँ चराते और पीछे-पीछे वंशी बजाते कृष्ण को देखकर, एक मेघ प्रेम से भरकर उनके ऊपर छत्र बनकर खड़ा हो गया, अपने शरीर से अपने प्रिय सखा को आश्रय देते हुए, और साथ ही उन पर फूलों की वर्षा करते हुए (श्लोक 16)।

भील-ललनाएँ और गोवर्धन पर्वत की कृपा

इन पहाड़ियों में रहने वाली सीधी-सादी वनवासी स्त्रियों की भी, गोपियाँ गाती हैं, प्रेम-पीड़ा इस भूमि की सुगन्धित लाल मिट्टी से शान्त हो जाती है — वह मिट्टी जिसे बलराम और कृष्ण के चरण पहले ही स्पर्श कर चुके हैं (श्लोक 17)। और गोवर्धन पर्वत स्वयं, वे घोषित करती हैं, प्रभु के सभी सेवकों में अग्रणी है: वह दोनों भाइयों के चरण-स्पर्श मात्र से हर्षित हो उठता है, उसका यह आनन्द उन ताज़ी घासों में प्रकट होता है जो उनके चलने भर से उग आती हैं, और वह अपना शुद्धतम जल, मधुरतम चरागाह, आश्रयदायक गुफाएँ और अपने कन्द-मूल उन्हें तथा उनकी गौओं और सखाओं को निःशुल्क अर्पित करता है (श्लोक 18)।

सम्पूर्ण सृष्टि स्तब्ध, सम्पूर्ण सृष्टि आनन्दित

यह अकथनीय आश्चर्य है, गोपियाँ गाती हैं, कि दोनों भाइयों की वंशी के उन्हीं धीमे, मधुर स्वरों के कारण — जब वे अपने सखाओं सहित गौओं को एक वन से दूसरे वन ले जाते हैं, गौओं के पिछले पैर बाँधने की रस्सी सिर पर लपेटे और उद्वण्ड गौओं को नियंत्रित करने वाली रस्सी कंधे पर रखे — हर गतिशील प्राणी, यहाँ तक कि बहती हुई नदियाँ भी, थम जाती हैं, जबकि उन वृक्षों में, जो हिल भी नहीं सकते, आनन्द की सिहरन

दौड़ जाती है (श्लोक 19)।

गोपियाँ प्रभु की लीलाओं में लीन हो जाती हैं

इस प्रकार ब्रज की नारियाँ गाती रहीं, वृन्दावन में विचरण करने वाले प्रभु की इन अनेक लीलाओं को आपस में सुनाते हुए, यहाँ तक कि उस वर्णन में ही वे स्वयं उसी में पूर्णतः लीन हो गईं।

एवंविधा भगवतो या वृन्दावनचारिणः ।

वर्णयन्त्यो मिथो गोप्यः क्रीडास्तन्मयतां ययुः ॥ २० ॥

evam-vidhā bhagavato yā vṛndāvana-cāriṇaḥ varṇayantyo mitho gopyaḥ kṛīḍās tan-mayatām yayuḥ

अर्थ: वृन्दावन में विचरण करने वाले प्रभु की इस प्रकार की लीलाओं को आपस में वर्णन करते हुए, गोपियाँ, उस वर्णन में ही, पूर्णतः उन लीलाओं में लीन हो गईं। (स्कन्ध 10, अध्याय 21, श्लोक 20)

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. प्रभु का स्मरण तर्क को लौंघ जाता है। जब गोपियाँ कृष्ण की वंशी-ध्वनि का वर्णन करने का प्रयास करती हैं, तो उनके प्रेम का वेग उनके ही शब्दों को अधूरा छोड़ देता है (श्लोक ३-४)। प्रभु का सच्चा स्मरण कोई सुव्यवस्थित विवरण नहीं, अपितु एक ऐसा अनुभव है जो हमारे कहने के प्रयास से सदा आगे निकल जाता है।
2. भक्ति सम्पूर्ण सृष्टि की स्वाभाविक भाषा है। मृग, नदियाँ, गौएँ, मेघ, और यहाँ तक कि स्थिर वृक्ष भी वंशी के प्रति प्रेम और आनन्द से उत्तर देते हैं (श्लोक 10-16, 19)। प्रभु के प्रति प्रेम किसी भी प्राणी के लिए पराया नहीं; यह तो हर हृदय, चाहे वह कितना ही साधारण क्यों न हो, में पहले से विद्यमान सामर्थ्य है।
3. वैराग्य का लक्ष्य प्रभु का दर्शन ही है। गोपियाँ वन के पक्षियों की कल्पना उन मुनियों के रूप में करती हैं जो केवल कृष्ण को देखने और उनकी वंशी सुनने के लिए शाखाओं पर चढ़े हैं, किसी अन्य ध्वनि से विचलित हुए बिना (श्लोक 14)। तप तभी अपना अर्थ पाता है जब वह अन्ततः प्रभु की उपस्थिति तक पहुँचाए।
4. छोटी-सी निःस्वार्थ सेवा भी प्रभु को प्रिय है। गोवर्धन पर्वत कुछ भव्य नहीं देता — केवल जल, चरागाह, आश्रय और कन्द-मूल — फिर भी गोपियाँ उसे हरि के सेवकों में अग्रणी कहती हैं (श्लोक 18)। प्रभु को अर्पण का आकार नहीं, उसकी भावना प्रिय है।
5. प्रभु की लीलाओं का वर्णन करना ही उनमें प्रवेश करना है। गोपियाँ केवल जो सुना था उसका वर्णन करने चली थीं, और वर्णन करते-करते ही उसमें लीन हो गईं (श्लोक 20)। कृष्ण की महिमा को सुनना और सुनाना भक्ति की तैयारी मात्र नहीं, अपितु स्वयं उनकी उपस्थिति में प्रवेश का मार्ग है।

एक भाक्तेमय चिन्तन

इस अध्याय से जो हमारे मन में टिक जाता है, वह कोई एक घटना नहीं बल्कि एक भाव है — गोपियों का कृष्ण की वंशी को शब्दों में बाँधने का प्रयास करना, और असफल होना, और उसी असफलता का उनका गीत बन जाना। हम प्रायः यह मान बैठते हैं कि भक्ति को पहले समझा जाना चाहिए, तभी वह अनुभव की जा सकती है — कि हृदय को हिलाने देने से पहले सही शब्द, सही व्याख्या चाहिए। यह अध्याय उस क्रम को पलट देता है। ब्रज की नारियाँ अपना वर्णन कभी पूरा नहीं कर पातीं; एक वाक्य भी पूरा होने से पहले प्रेम उन्हें अभिभूत कर देता है, और जो बाहर आता है वह है उस हर वस्तु की स्तुति जिसे वंशी ने छुआ है — मृग, नदियाँ, पर्वत, यहाँ तक कि पक्षी बने वे मुनि भी। शायद प्रभु का गुणगान करने का यही अर्थ है: किसी विषय में निपुण होना नहीं, बल्कि उससे इतना अभिभूत हो जाना कि हमारा अपना स्वर भी उसके वर्णन का भाग बन जाए। हम कभी उस स्थान पर खड़े न हों जहाँ गोपियाँ उस शरद-वन में यमुना के किनारे खड़ी थीं, परन्तु उनका यह अधूरा गीत हमारी अपनी प्रार्थना के लिए एक आदर्श बन जाता है — ऐसी प्रार्थना जो वाक्पटु बनने की प्रतीक्षा किए बिना प्रेम करना आरम्भ कर देती है।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, सही शब्दों की प्रतीक्षा करने के बजाय, कृष्ण की कोई एक स्मृति — उनकी वंशी, उनका रूप, इस अध्याय की कोई एक पंक्ति — अपने मन में उठने दें, और उसे पूरी तरह समझाने का प्रयास किए बिना बस उसमें ठहर जाएँ। अपने हृदय को वैसे ही उत्तर देने दें जैसे गोपियों, मृगों, स्वयं नदियों ने दिया — विश्लेषण से नहीं, मौन ध्यान से। इसी प्रार्थना के साथ समाप्त करें जिससे यह कथा आरम्भ हुई थी: ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

उपसंहार

कृष्ण की इस वंशी-कथा का प्रथम श्लोक से अन्तिम श्लोक तक एक ही अखण्ड स्तुति है। कृष्ण शरद-वन में प्रवेश कर अपनी वंशी बजाते हैं; ब्रज की नारियाँ, उसका वर्णन एक-दूसरे से पूरा न कर पाकर, गीत गाने लगती हैं, कृष्ण के मुख-दर्शन को नेत्रों का सच्चा पुरस्कार घोषित करती हैं, और उसी एक धुन को गोवर्धन पर नाचते मयूरों, स्तब्ध मृगों, मोहित देवांगनाओं, अश्रुपूरित गौओं, मुनि-समान पक्षियों, उनके चरण आलिंगन करती नदी, उन्हें आश्रय देते मेघ, और जल-छाया-अन्न से उनकी सेवा करते पर्वत तक पहुँचाती हैं। अन्त में, गोपियाँ जो केवल कृष्ण की लीलाओं के विषय में बोलने चली थीं, स्वयं उन्हीं में समा जाती हैं, उनका वर्णन और उनका प्रेम अब दो नहीं, एक ही रह जाते हैं। हम भी, जिन्होंने केवल इस वंशी-गीत के विषय में सुना है, उसी तन्मयता का कुछ अंश अपने स्मरण में धारण करें, और प्रभु की महिमा को, व्याख्या करने से पहले, अपने हृदय को छूने दें।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

संदर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण संस्करण), दशम स्कन्ध (पूर्वार्ध), एकविंश अध्याय।

- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी एवं लिप्यन्तरण सहित दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में प्रस्तुत हैं। यह किसी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक के संबंध या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-10-chapter-21-gopis-glorify-krishnas-flute-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

